वर्ष ७ अंक ७८ श्रावण-भाद्रपदः-२०७१/अगस्त-२०१४

ओ३म्

आर्ष-ज्योतिः

तमसो मा ज्योतिर्गमय

श्रीमद् दयानन्द वेदार्ष-महाविद्यालय-न्यास
का द्विभाषीय मासिक मुख पत्र

यद् वेदेषु सुतत्त्वमस्ति रुचिरं सत्यं शिवं सुन्दरम्
यद् वा संस्कृतवाचि गुह्यमतुलं ज्ञानाऽमृतं राजते।
तत्तल्लोकहितार्थमेव विकिरत् चाऽन्धंतमो नाशयत्
'आर्षज्योति' रुदेत्यहो! गुरुकुलात् सत्यार्थसंस्थापकम्।।

ज्योतिष्कृणोति सूनरी

❖ ओ३म् ❖

आर्ष-ज्योतिः

श्रीमद् दयानन्द वेदार्ष-महाविद्यालय-न्यास

का

द्विभाषीय मासिक मुखपत्र

श्रावण-भाद्रपद-मासः, विक्रम संवत् - २०७१

वर्ष : ७ अंक ७८ अगस्त २०१४ मूल्य : ५.०० रुपये

ज्योतिष्कृणोति सूनरी

संरक्षक - संस्थापक
स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती

❖

मुख्य सम्पादक
डॉ. धनञ्जय आर्य (अवैतनिक)

❖

सम्पादक
चन्द्रभूषण आर्य
रवीन्द्र आर्य

❖

कार्यकारी सम्पादक
ब्र. शिवदेव आर्य

❖

व्यवस्थापक
ब्र. अनुदीप आर्य
ब्र. कैलाश आर्य

❖

कार्यालय
श्रीमद्दयानन्द आर्ष ज्योतिर्मठ गुरुकुल
दून वाटिका-२, पौंधा, देहरादून (उत्तराखण्ड)
दूरभाष - ०१३५-२१०२४५१
जंगमवाणी - ०९४१११०६१०४
ई-मेल : arsh.jyoti@yahoo.in
website: www.pranawanand.org

❖

सदस्यता शुल्क
आजीवन - १०००.०० रुपये
वार्षिक - ५०.०० रुपये
एक प्रति - ५ रुपये

विषय-क्रमणिका

विषय	पृष्ठ
सम्पादकीय	२
महर्षि दयानन्द सरस्वती को.....	४
वैराग्य	७
हम आर्यवीर , आर्यवीर...	११
वैदिक-ज्ञान-मंजुषा	१२
भावनाओं का स्वरूप	१३
साई बाबा का विरोध.....	१४
दान	१५
अथ श्री ओमानन्द लहरी	१६
गुरुकुल	१७
संस्था समाचार	१८
ऋषि दयानन्द के दीवानों.....	१९
संस्कृत-शिक्षणम्	२०

नीमीतीरे सततसुखदे सर्वतो दर्शनीयम्,
पौन्धाग्रामे नगरनिनदाद् दूरमीक्ष्यं मनुष्यैः।
हैमे तुङ्गे शिखरिशिखरे शोभनोपत्यकायाम्,
आर्षज्योतिर्मठगुरुकुलं राजते संसृतौ मे।।

रवीन्द्रकुमारः

न्याय्यात् पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः

सम्पादक की कलम से...

संस्कृत और हिन्दी का विरोध क्यों?

प्रिय पाठकों ! वर्तमान में प्रचलित संस्कृत और हिन्दी के विवाद के शब्द निश्चित ही आपके कानों में कहीं से सुनायी दिये होगें। कुछ ही दिन पहले केन्द्र सरकार ने हिन्दी को बढ़ावा देने की बात कही थी, जिसका विपक्ष के लोगों और दक्षिणी लोगों ने विरोध किया था। आज आजादी के छः दशकों के बाद भी हमारे देश के काम-काज की भाषा हिन्दी नहीं बन पायी है, क्योंकि देश के जो भी नीति-निर्माता रहे उन्होंने हिन्दी के साथ बहुत भेदभाव किया, जिसके कारण हिन्दी आगे नहीं बढ़ पायी है।

आज भारत में सबसे ज्यादा बोली जाने वाली और समझी जाने वाली भाषा हिन्दी है। सम्पूर्ण विश्व में भी हिन्दी का वर्चस्व है। लेकिन उसके पाश्चात् भी भारत के नेताओं ने कभी हिन्दी को बढ़ावा नहीं दिया। हिन्दी राजभाषा है, इसके बाद जब उसका इतना बुरा हाल हो सकता है तो फिर और भाषाओं के विकास की चर्चा करना ही व्यर्थ है। हिन्दी सप्ताह सभी सरकारी कार्यालयों में मनाना होता है। आज कार्यालयों के बाहर हिन्दी सप्ताह में भी सरकारी कर्मचारी हिन्दी में काम करने के लिए तैयार नहीं होते हैं। इससे ज्यादा दुर्गति इस भाषा की क्या हो सकती है?

हिन्दी की दुर्गति का एक और सबसे बड़ा कारण आधुनिक शिक्षा नीति है। आज प्रत्येक अमीर व गरीब व्यक्ति हिन्दी माध्यम से अपने बच्चों को पढ़ाना नहीं चाहता है। उनके मन में अंग्रेजी इतने अन्दर तक बैठ चुकी है कि वे समझते है कि अंग्रेजी के बिना तो पढ़ना ही व्यर्थ है। इसके कारण आने वाली पीढ़ी अंग्रेजी के प्रति तेजी से बढ़ रही है। यह एक भयंकर समस्या है, क्योंकि अंग्रेजी से पला-बढ़ा बच्चा भारतीय संस्कृति और भारतीय परम्पराओं के लुप्त होने का खतरा बढ़ गया है। आज भारत के एक गॉव किसान का बेटा भी हिन्दी भाषा में लिखे अंकों को न तो बोल पाता है और न ही समझ पाता है। इसके पीछे कारण हिन्दी का घटता वर्चस्व और अंग्रेजी का बढ़ता महत्त्व है।

आज भारतीय व्यक्ति हिन्दी बोलने में शर्म महसूस करता है और अंग्रेजी बोलने में वह गर्व महसूस करता है। इसके पीछे सरकार की नीतियाँ, शिक्षा और पश्चिमी सभ्यता है। आज तक पीछे की सरकारों ने हिन्दी को दबाने का काम किया है। अगर मोदी सरकार हिन्दी को बढ़ाने का काम करती है तो इसमें इतने विरोध की क्या आवश्यकता ? अपने ही हिन्दी भाषी बहुल देश में अगर हिन्दी का विकास नहीं होगा तो फिर कहाँ होगा? अंग्रेजी के उत्थान के लिए अनेक विकसित देश लगे हुए हैं पर क्या भारत की हिन्दी भाषा का विकास कोई और देश करेगा?

संघ लोक सेवा आयोग की परीक्षा में २०११ से सी-सेट का प्रश्न पत्र लगाया गया। इस प्रश्न पत्र के आते ही हिन्दी भाषी प्रान्तों के छात्र, कृषक परिवार के छात्र अर्थात् जो भी कला वर्ग से पढ़ा हुआ छात्र है, वह इस परीक्षा से इस प्रश्नपत्र ने बाहर कर दिया, क्योंकि इस प्रश्नपत्र का विषय ही ऐसा बनाया है कि इसमें हिन्दी पृष्ठभूमि के छात्र आगे जा ही न सकें। यह तथ्य लगातार तीन वर्षों से आयोजित हुई परीक्षा के परिणामों से स्पष्ट है। जहाँ पहले हिन्दी पृष्ठभूमि के छात्र सर्वोच्च अंक प्राप्त करते थे। आज वे प्रारम्भिक सौ छात्रों में भी नहीं आ पा रहे है। इससे सैंकड़ों हिन्दी भाषी छात्र आई.ए.एस., आई.पी.एस. और आई.एफ.एस. बनने से चूक रहे हैं। वर्ष २०११ में प्रारम्भिक परीक्षा में ९३२४ लोग अंग्रेजी माध्यम से उत्तीर्ण हुए, जबकि हिन्दी माध्यम से केवल 1700 छात्र ही उत्तीर्ण हुए। आज हिन्दी भाषी छात्रों का विरोध करना बिल्कुल उचित है। क्योंकि वे इस परीक्षा के पहले चरण में ही बाहर हो रहे है। यह

संविधान में उल्लिखित सामाजिक न्याय की भावना के अतिरिक्त मूलभूत अधिकारों अनुच्छेद १४ यानी समानता का अधिकार और अनुच्छेद 16 यानी नागरिकों को राज्य के अधीन किसी पद पर नियोजन या नियुक्ति से सम्बन्धित विषयों में अवसर की समानता की गारण्टी का भी उल्लंघन है।

२०११ में अलघ समिति की अनुशंसा के आधार पर संघ लोक सेवा आयोग की परीक्षा में व्यापक परिवर्तन किये गये थे पर इस समिति ने अंग्रेजी को शामिल करने की कोई बात नहीं कही थी फिर भी बिना किसी आधार के अंग्रेजी को शामिल कर दिया। इसके पीछे सबसे बड़ा कारण अंग्रेजी का है। आजादी के बाद १९७९ तक तो अंग्रेजी के माध्यम से ही यह परीक्षा होती थी। अनेक प्रयासों के बाद १९७९ के बाद भारतीय भाषाओं के माध्यम से उच्च पदों पर पहुँच सकें है। २०११ में कपिल सिब्बल की कृपा से यह सारी योजना बनी कि कैसे हिन्दी भाषियों के वर्चस्व को कम किया जाये। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि ये सारे नीतिनिर्माता नेता एवं उच्चपदस्थ अधिकारी विदेशों में रहकर अंग्रेजी माध्यम से पढ़ते हैं, और फिर उसी विदेशी शिक्षानीति को भारत में लागू करते हैं। आज ऐसे लोगों के कारण ही हमारी भारतीय संस्कृति और भारतीय परम्परायें लुप्त हो रही हैं। सबसे बड़ा आन्तरिक खतरा आज हमें इन्हीं लोगों से है। आज अगर हिन्दी भाषी छात्र मोदी सरकार से न्याय की माँग करती है तो गलत क्या है? हिन्दी समर्थक सरकार है तो निश्चित हिन्दी भाषी छात्रों की विजय है और होनी भी चाहिए।

१ अगस्त से ८ अगस्त तक संस्कृत सप्ताह प्रतिवर्ष मनाया जाता है। इस वर्ष मोदी सरकार ने सभी सी.बी. एस.सी. विद्यालयों में पत्र भेजकर संस्कृत सप्ताह मनाने का अनुग्रह किया है। इस पर देश में कही पर भी विरोध नहीं हुआ है, लेकिन तमिलनाडू में जयललिता और करुणानिधि ने इसे अन्य भारतीय भाषाओं के साथ भेद-भाव की राजनीति बताया है। इन नेताओं से मैं पूछना चाहता हूँ कि जब विगत सरकार अंग्रेजी को हर जगह बसा रही थी, तब करुणानिधि कहाँ गये थे? सुब्रह्मण्यम स्वामी ने इनको बहुत अच्छा उत्तर दिया कि बोलने से पहले अपने नाम बदल लो, क्योंकि जयललिता और करुणानिधि शुद्ध संस्कृत के नाम है। जिस भाषा को ये नेता समर्थन कर रहे हैं। वह तमिल भाषा भी संस्कृत पर ही आश्रित है अगर तमिल भाषा को वे सुरक्षित रखना चाहते है तो उससे पहले संस्कृत की सुरक्षा करनी पड़ेगी। यह प्रयास निश्चित ही संस्कृत भाषा के लिए संजीवनी का काम करेगा, क्योंकि गत दिवसों में स्वयं गृहमन्त्री ने सदन में यह बताया कि संस्कृत भाषा सब भाषाओं की जननी है। इसके उच्चारण को समस्त विश्व ने वैज्ञानिक माना है। इसका विकास होना चाहिए। सरकार का यह प्रयास नितान्त स्तुत्य है।

प्रिय पाठकगण! हिन्दी और संस्कृत भाषा आज तक उपेक्षा का परिणाम यह हो रहा है कि लोग हिन्दी भाषी व संस्कृतभाषी को हीन समझ रहे हैं। अंग्रेजी भाषी लोग अपने को अत्यन्त महत्त्वपूर्ण समझ रहे हैं। चारों तरफ अंग्रेजी का ऐसा आतंक मच गया है कि लोग यह समझने लग गये है कि अंग्रेजी के विना तो जीवन व्यर्थ है। यह भावना हमें समाज से हटानी होगी। आज सरकार यदि संस्कृत और हिन्दी के संरक्षण का प्रयास करती है तो हमें इसका स्वागत करना चाहिए। मेरा मानना है कि जो भी वास्तविक देशभक्त हैं, जिसके अन्दर देशहित की भावना है, वह व्यक्ति कभी भी हिन्दी और संस्कृत का विरोध करेगा ही नहीं । भारतीय संस्कृति और सभ्यता को अगर हम जीवित रखना चाहते हैं तो हमें निश्चित ही इन दोनों भाषाओं की रक्षा करनी चाहिए। इन्हीं भाषाओं के बाद अन्य भाषाओं की रक्षा सम्भव है। शुद्ध हिन्दी पूर्णत: संस्कृत पर आधारित है। संस्कृत की सुरक्षा में सभी की सुरक्षा है। इसीलिए हम सबको अपने अपने प्रयासों से इन भाषाओं की रक्षा करनी चाहिए। हमारा एक अल्प प्रयास भी इन भाषाओं के लिए संजीवनी का काम करेगा। आप सबके विचारों की प्रतीक्षा में.....

-रवीन्द्र कुमार
raryaup@gmail.com

महर्षि दयानन्द सरस्वती को चार वेद कब, कहां, कैसे व किससे प्राप्त हुए?

– मनमोहन आर्य

हर अध्येता व स्वाध्याय करने वाले को सभी शंकाओं व प्रश्नों के उत्तर सरलता से प्राप्त नहीं होते परन्तु प्रयास व पुरूषार्थ करने से कुछ के उत्तर मिल जाते हैं और अन्यों के बारे में अनुमान व संगति लगा कर काम चलाना पड़ता है। हम भी स्वामी दयानन्द के सभी ग्रन्थों सहित आर्य विद्वानों के प्रमुख ग्रन्थों को पढ़ने का प्रयास करते हैं। वर्तमान में हमारे कुछ प्रश्न हैं जिनका उत्तर नहीं मिल पा रहा है। उनमें से एक है कि महर्षि दयानन्द को चार वेदों की मन्त्र संहितायें कब, कैसे, कहां से व किससे प्राप्त हुई? वह मन्त्र संहितायें हस्त लिखित थी या मुद्रित थी? यदि मुद्रित थीं तो उनका प्रकाशक कौन था? **विचार करने पर हमें लगता है कि महाभारत काल के बाद सन् १८६३ में महर्षि दयानन्द का कार्य क्षेत्र में प्रादुर्भाव होने तक भारत में वेदों की मन्त्र संहितायें वा सायण आदि किसी भाष्यकार के वेद भाष्य का मुद्रण व प्रकाशन नहीं हुआ था।** ऐसी स्थिति में यदि उन दिनों कोई वेद देखना या पढ़ना चाहता होगा, तो उसे भारी धन देकर उसकी प्रतिलिपि करानी हुआ करती होगी या किन्हीं लोगों द्वारा की गई प्रतिलिपि, शुद्ध व अशुद्ध, को क्रय करना होता होगा। हमारे पास यह भी जानकारी नहीं है कि वेदों की मन्त्र संहिताओं का प्रेस द्वारा मुद्रण होकर भारत में पहली बार कब प्रकाशन हुआ था? जानकारी के अनुसार यह प्रकाशन सन् १८८३ व इसके पश्चात् ही हुए प्रतीत होते हैं जिसमें सन् १८८९ में पं. गुरूदत्त विद्यार्थी के सम्पादकत्व में लाहौर की विरजानन्द प्रेस से सामवेद संहिता का प्रकाशन है जिसका उल्लेख **Works of Pt. Guru Datta Vidyarthi** के विद्वान् लेखक प्रो. डा. रामप्रकाश का पुस्तक के अन्त में दी गई सहायक ग्रन्थों की सूची में किया गया है। हमें बताया गया है कि पंण्डित गुरूदत्त जी ने चारों वेदों की संहिताओं का सम्पादन किया था जो प्रकाशित हुई थीं और यह सभी ग्रन्थ डा. राम प्रकाश जी के पास उपलब्ध हैं। विदेशों में लन्दन से चारों वेदों की मन्त्र संहिताओं का प्रकाशन महर्षि दयानन्द के जीवनकाल में ही हो चुका था जिसे प्रो. मैक्समूलर या उनके किसी सहयोगी विद्वान् द्वारा सम्पादित किया गया अनुमान होता है। **ऐसा प्रतीत होता है कि महाभारत काल के पश्चात वेद मन्त्र संहिताओं का प्रथम मुद्रण व प्रकाशन इंग्लैण्ड के लन्दन नगर में हुआ था।**

सन् १८६९ में काशी विद्या की नगरी कही व मानी जाती थी। काशी में बड़े-बड़े सनातन धर्मी पौराणिक विद्वान पं. विशुद्धानन्दशास्त्री व पं. बालशास्त्री आदि विद्यमान थे परन्तु इनमें भी यथार्थ वेद वैदुष्य शून्य या नाममात्र था। **जब विद्या और धर्म की नगरी काशी में कोई वेदों का पठन-पाठन करता ही नहीं था तो कहां से विद्वान् अध्यापक मिलते, कौन किसको पढ़ाता व कौन पढ़ता। ऐसी स्थिति में वेदों को मुद्रित व प्रकाशित कौन कराता? ऐसा होने पर भी प्राचीन हस्त लिखित वैदिक साहित्य की रक्षा हो सकी और आज हमें चार वेद, चारों ब्राह्मण ग्रन्थ, कुछ वेदांग व उपांग, दर्शन व उपनिषद्, आयुर्वेद के ग्रन्थ चरक व सुश्रुत आदि, प्रक्षेपों से युक्त मनुस्मृति व अन्य अनेक ग्रन्थ सुरक्षित उपलब्ध हैं, यह अपने आप में विश्व का सबसे बड़ा चमत्कार है।** जिन पूर्वजों ने निःस्वार्थ भाव से इन ग्रन्थों की रक्षा की, सारी मानव जाति उनकी भी कृतज्ञ है। हमारे पौराणिक सनातन धर्मी विद्वान् गीता, वाल्मिकी रामायण, रामचरित मानस, उपनिषद्, वेदान्त दर्शन, योग दर्शन व अर्वाचीन ग्रन्थ पुराणों को पढ़-पढ़ाकर काम चला लेते थे और इसी पर वह वैदिक विद्वान् होने का दम्भ भरते थे। इससे सम्बन्धित मनोरंजक व खोजपूर्ण विवरण पं. ब्रह्मदत्त

जिज्ञासु ग्रन्थावली में विद्यमान हैं जो विद्वानों व स्वाध्याय करने वालों के लिए पठनीय है। इस विवरण से ज्ञात होता है कि भारत में ईश्वरीय ज्ञान वेद, संहिताओं व सायण भाष्य के रूप में हस्तलिखित रूप में ही यत्र-तत्र विद्यमान रहे होगें। ऐसे में यदि कहीं व किसी के पास हस्त-लिखित वेदों की प्रतियां रहीं भी होगीं तो इन्हे-गिने नगण्य प्राय: लोगों के पास ही रही होगीं। ऐसे लोगों से यदि कोई वेद मंत्र संहितायें मांगता तो उनका मिलना कठिन ही था यद्यपि इन वेद के धारकों के पास वेदों का कुछ भी उपयोग नहीं था। ऐसी स्थिति में यदि उन्हें कोई बड़ा आर्थिक प्रलोभन देता होगा तो सम्भव है कि वह उसे अपनी हस्तलिखित वेद सम्पदा को दे सकते थे। वेद संहिताओं को प्राप्त करने का दूसरा विकल्प यह हो सकता था कि महर्षि के जीवनकाल में वेद संहिताओं का प्रकाशन लन्दन में हो चुका था। इन वेद मन्त्र संहिताओं का एक सेट महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी सभा, परोपकारिणी सभा, अजमेर में उपलब्ध है। हमें वैदिक यन्त्रालय के प्रबन्धक श्री मोहनचन्द तंवर जी ने लन्दन से सन् १८७५ से पूर्व प्रकाशित इन ग्रन्थों को देख कर बताया है कि इन वेद संहिताओं में सभी मन्त्रों के साथ-साथ मन्त्र का पद-पाठ भी दिया हुआ है। अत: एक सम्भावना यह है कि महर्षि दयानन्द ने वेद संहितायें लन्दन से ही मंगाई हों या यदि यह भारत में किसी पुस्तक विक्रेता आदि से उपलब्ध रहीं हो तो उनसे किसी एक से खरीदी हो।

स्वामी दयानन्द ने लेखन, प्रचार तथा शास्त्रों आदि के द्वारा वेदों का प्रचार किया। जब वह सन् १८६० में गुरू विरजानन्द सरस्वती की कुटिया में अध्ययनार्थ पहुंचे थे तो यह किंवदन्ती है कि गुरूजी ने उनसे पूछा था कि तुम क्या-क्या पढ़े हो और कौन-२ से ग्रन्थ तुम्हारे पास हैं। स्वामी जी के द्वारा जानकारी दिये जाने पर अनार्ष ग्रन्थों को उन्होंने यमुना नदी में बहा आने को कहा था और यह बताया जाता है कि स्वामी दयानन्द जी ने उनकी आज्ञा का पालन किया। अक्तूबर-नवम्बर, सन् १८६३ में शिक्षा पूरी कर स्वामीजी गुरू दक्षिणा की परम्परा का निर्वाह कर आगरा आये और यहां लम्बे समय तक रहे। वेदों की उपलब्धि या प्राप्ति के बारे में हम महर्षि दयानन्द के पं. लेखराम रचित जीवन चरित से दो उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। पहला उदाहरण सन् १८६४ का है जिसे **''वेदों की खोज में धौलपुर की ओर प्रस्थान''** शीर्षक दिया गया हैं। इस उदाहरण में कहा गया है कि ***''एक दिन स्वामी जी ने पंडित सुन्दरलाल जी से कहा कि कहीं से वेद की पुस्तक लानी चाहिए। सुन्दर लाल जी बड़ी-खोज करने के पश्चात् पंडित चेतोलाल जी और कालिदास जी से कुछ पत्रे वेद के लाये। स्वामीजी ने उन पत्रों को देखकर कहा कि यह थोड़े हैं, इनसे कुछ काम न निकलेगा। हम बाहर जाकर कहीं से मांग लावेंगे। आगरा में ठहरने की अवस्था में स्वामी जी समय-समय पर पत्र द्वारा अथवा स्वयं मिलकर विरजानन्द जी से अपने सन्देह निवृत कर लिया करते थे।''*** इस विवरण से यह ज्ञात होता है कि उन दिनों देश में वेद उपलब्ध थे। इसीलिए उन्होंने कहा कि हम बाहर जाकर कहीं से मांग लावेंगे। उनके द्वारा कही गई पंक्तियों में आत्मविश्वास दिखाई देता है। उन्हें विश्वास था कि उन्हें अन्य किसी स्थान से वेद उपलब्ध हो जायेगें। कहां से उपलब्ध होगें, इस पर प्रकाश नहीं पड़ता। हमारा विचार है कि यदि वेद कहीं रहे भी होंगे तो वह पौराणिक ब्राह्मणों के पास ही रहे होगें? वह उन्हें वेद क्यों देते? उन्होंने यदि यह शब्द कहे तो इसका अर्थ था कि उन्हें वेद मिलने की सम्भावनाओं का पूरा-पूरा पता था। यह भी हो सकता है कि लन्दन से प्रकाशित वेद संहितायें भारत के किसी प्रमुख पुस्तक विक्रेता के पास उपलब्ध रहीं हों?

हमें यहां दो सम्भावनायें लगती हैं कि या तो यह उन्हें भारत के किसी पण्डित जी से प्राप्त हुए होगें। यह सम्भावना कम लगती है। यह भी हो सकता है कि लन्दन में मैक्समूलर आदि पाश्चात्य किसी विद्वान् ने वेद संहिताओं का जो प्रकाशन किया था वह भारत में पुस्तक विक्रेताओं के पास उपलब्ध रहा हो, उससे

महर्षि या उनके किसी भक्त ने खरीद कर स्वामी जी को उपलब्ध कराया हो। यह भी हो सकता है कि महर्षि के किसी भक्त ने उनके कहने पर लन्दन से ही इसे डाक आदि माध्यम से मंगवाया हो। महर्षि दयानन्द ने अपने ग्रन्थों व लेखों में विदेशी विद्वानों के कुछ ग्रन्थों का उल्लेख किया है जिसमें भारत की प्रशंसा अथवा आलोचना दोनों ही हैं। इन्हें भी उन्होंने देश या विदेश से मंगवाया होना प्रतीत होता है। जो भी हो यह सुखद स्थिति है कि उन्हें वेद प्राप्त हो सके जिससे वह सत्यार्थ प्रकाश, **ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कार विधि, वेद भाष्य जैसे महत् कार्य सम्पादित कर सके। हमें यह भी ज्ञात हुआ है कि भारत में वेदों का मुद्रण व प्रकाशन पहली बार लाहौर में सन् १८८९ में हुआ था जिसे आर्य जगत के प्रसिद्ध विद्वान् व महर्षि दयानन्द के अनन्य भक्त पं. गुरूदत्त विद्यार्थी जी ने सम्पादित किया था। इसकी एक प्रति डा. रामप्रकाश, गुरूकुल कांगड़ी के पास उपलब्ध है। इसके बाद वेदों का एक संस्करण श्री दामोदर सातवलेकर जी ने सन् १९२७ में प्रकाशित किया था। इस ग्रन्थ में रह गई कुछ अशुद्धियों की आर्य जगत के विद्वान् पं. ब्रह्मदत्त जिज्ञासु जी ने विस्तृत आलोचना की जिन्हें जिज्ञासु ग्रन्थावली में देखा जा सकता है।**

हमारे लेख का मुख्य विषय महर्षि दयानन्द को सन् १८६४ से १८६७ के बीच वेद संहिताओं की प्राप्ति से सम्बन्धित है। इस प्रश्न व शंका का समाधान हो जाता यदि स्वामी दयानन्द की उत्तराधिकारिणी सभा ''परोपकारिणी सभा, अजमेर'' ने महर्षि दयानन्द की ३० अक्तूबर, सन् १८८३ ई. को देहावसान होने के बाद उनके पास अन्य लेखकों, विद्वानों व ग्रन्थकारों की लिखित व प्रकाशित समस्त साहित्यिक सम्पदा अर्थात्, ग्रन्थों, पुस्तकों, पाण्डुलिपियों आदि की एक ग्रन्थ सूची प्रकाशित करा दी होती। यह ग्रन्थ सूची १३१ वर्ष व्यतीत हो जाने पर भी सभा ने प्रकाशित क्यों नहीं की, ये हमारी समझ से बाहर है। अनेक विद्वान् इसका अभाव अनुभव करते हैं और परस्पर अपनी पीड़ा को बांटते हैं। यदि ऋषि के पास उपलब्ध ग्रन्थों की सूची प्रकाशित करा दी जाती तो **हमें यह ज्ञात होता कि ऋषि के पास जो वेद संहितायें थी, वह पाण्डुलिपि व हस्तलिखित थी या मुद्रित थी?** यदि मुद्रित थी तो उसका प्रकाशक कौन था और वह कहां से प्रकाशित हुई थी। वह सभी संहितायें एक ही प्रकाशक की थी व भिन्न प्रकाशकों द्वारा प्रकाशित थी और उनके प्रकाशन के वर्ष कौन-२ से हैं? यहां हम आर्य जनता का ध्यान महर्षि दयानन्द द्वारा वेद भाष्य का आरम्भ करते हुए ऋग्वेद भाष्य के प्रथम मण्डल के ६१ वें सूक्त तक किये गये भाष्य जिसमें उन्होंने प्रत्येक मन्त्र के दो-दो अर्थ एक व्यवहारिक व दूसरा पारमार्थिक अर्थ किया था, की ओर दिलाना चाहते हैं। सभा ने उनके इस विशिष्ट भाष्य को आज तक प्रकाशित नहीं किया। पं. मीमासंक जी का कथन है कि बाद में यह ग्रन्थ सभा ने खो दिया। इस पर श्री मीमांसक जी टिप्पणी करते है कि जिस महत्त्वपूर्ण कार्य की उपेक्षा की जाती है उसका इसी प्रकार का हश्र होता है। यह और ऐसे अनेक ग्रन्थ जिनकी संख्या लगभग दो दर्जन है, अभी भी प्रकाशन की प्रतीक्षा में हैं। इनमें से कितने उपलब्ध हैं या नहीं है, इसका विवरण शायद् ही सभा के अधिकारियों को ज्ञात हो।

हम इस लेख को विराम दे रहे हैं। वर्तमान में अनुमान के आधार पर हमारे प्रश्नों के जो उत्तर हैं वह यह है कि महर्षि दयानन्द को चार वेद भारत में सन् १८६४-६५ में हस्तलिखित पाण्डुलिपियों के रूप में प्राप्त हुए थे। यह भी सम्भव है कि उन्होंने लन्दन से प्रकाशित वेद संहिताओं को भारत में ही प्राप्त किया हो या लन्दन से प्रकाशित वेद संहिताओं को भारत में ही प्राप्त किया हो या लन्दन से मंगवाया हो। वस्तुतः वह किससे कब व कहां मिले इसका अनुसंधान किया जाना है। हम इस लेख में उठायें गये प्रश्नों के समाधान के लिए प्रयास करते रहेगें। आर्य जगत के सभी विद्वानों से प्रार्थना है कि यदि उन्हें इनके समाधान पता हों, तो सूचित करने की कृपा करें।

-चक्खुवाला, देहरादून (उ.ख.)

वैराग्य

(स्वामी देवव्रत सरस्वती के कतिपय प्रवचनों का संग्रह)

❑ संकलनकर्ता-आचार्य डॉ. धनञ्जय.....✍

वैराग्य अर्थात् जो विवेक से सत्यासत्य को जाना हो उसमें से सत्याचरण का ग्रहण और असत्याचरण का त्याग करना राग का परित्याग वैराग्य कहलाता है।

सुखानुशयी रागः (योग २/७)

सुख भोगने के पश्चात् चित्त में उसके भोग की इच्छा बनी रहती है उसे राग कहते हैं। राग का अभाव या विरक्ति ही वैराग्य कहलाता है।

दृष्टानुश्रविक विषय वितृष्णस्य वशीकार संज्ञा वैराग्यम्। (योग० १/१५)

देखें या सुने विषयों में तृष्णा को छोड़ देना वैराग्य कहलाता है। इसके दो भेद हैं-

१. अपर वैराग्य २. पर वैराग्य।

अपर वैराग्य के चार भेद हैं-

क. **यतमान**- विषयों के दोषों का चिन्तन करके इन्द्रियों को विषयों से हटाने का प्रयत्न।

ख. **यतमान** - इतनें विषयों की निवृत्ति हो गई है और इतनी वृत्तियाँ शेष हैं, इस प्रकार निवृत्त और विद्यमान चित्तवृत्तियों का पृथक्-पृथक् ज्ञान ।

ग. **एकेन्द्रिय**- अन्य सभी इन्द्रियों के विषयों का निरोध हो गया है, केवल अमुक इन्द्रिय का विषय अवशिष्ट है, ऐसा ज्ञान होना।

घ. **वशीकार**- इन्द्रियों के सभी विषयों से चित्तवृत्ति निवृत्त हो जाये और विषय प्रस्तुत होने पर भी उनमें प्रवृत्ति न होवे, इसे वशीकार संज्ञा वाला वैराग्य कहते हैं। इस वैराग्य से चित्तवृत्ति निवृत्त होकर सम्प्रज्ञात योग की प्राप्ति होती है।

तत् परं पुरूष ख्यातेर्गुण वैतृष्ण्यम् (योग१/१६)

जब पुरूष और चित्त की पृथक् अनुभूति अर्थात् अपने स्वरूप और परमात्मा का ज्ञान, चित्त के पृथक्त्व का ज्ञान और सत्त्वादि गुणों (सिद्धियों) से भी रहित हो जाना वैराग्य कहा जाता है। यह पर वैराग्य ही ज्ञान की पराकाष्ठा, अन्तिम सीमा है। **''ज्ञानस्य पराकाष्ठा वैराग्यम्''।** इसी के निरन्तर अभ्यास से कैवल्य मोक्षसुख की प्राप्ति होती है।

३. षट्क सम्पत्ति

तीसरा साधन षट्क सम्पत्ति अर्थात् छः प्रकार के कर्म करना।

१. **शम**- अपने आत्मा और अन्तः करण को अधर्माचरण से हटाकर धर्माचरण में प्रवृत्त सदा रखना।

२. **दम** - श्रोत्रादि इन्द्रियों और शरीर को व्यभिचारादि बुरे कर्मो से हटाकर जितेन्द्रियत्वादि शुभ कर्मो में प्रवृत्त रखना।

३. **उपरति**-दुष्ट कर्म करने वाले पुरूषों से सदा दूर रहना।

४. **तितिक्षा** - चाहे निन्दा, स्तुति, हानि, लाभ, कितना ही क्यों न हो, परन्तु हर्ष-शोक को छोड़ मुक्ति के साधनों में लगे रहना।

५. **श्रद्धा** - जो वेदादि शास्त्र और इनके बोध से पूर्ण आप्त विद्वान सत्योपदेष्टा महाशयों के वचनों पर विश्वास करना।

६. **समाधान** - चित्त की एकाग्रता।

४. **मुमुक्षुत्व** - जैसे क्षुधातुर को सिवाय अन्न-जल के दूसरा कुछ भी अच्छा नहीं लगता, वैसे बिना मुक्ति के साधन और दूसरे में प्रीति न होना।

श्रवणचतुष्टयम्:-श्रवण-मनन-निदिध्यासन-साक्षात्कार सदा तमोगुण अर्थात् क्रोध, मलिनता, आलस्य, प्रमाद आदि रजोगुण अर्थात् ईर्ष्या, द्वेष, काम, क्रोध, अभिमान, विक्षेप आदि दोषों से अलग होके सत्त्व अर्थात् शान्त प्रकृति, पवित्रता, विद्या, विचार आदि गुणों को धारण करें।

सुखी जनों से मैत्री, दु:खी जनों पर दया, पुण्यात्माओं से हर्षित होना और दुष्टात्माओं से न प्रीति और न वैर रखना। नित्य प्रति न्यून से न्यून दो घण्टा पर्यन्त मुमुक्षु ध्यान अवश्य करें जिससे भीतर के मन आदि पदार्थ साक्षात् होवे। अविद्यादि पांच क्लेशों को योगाभ्यास विज्ञान से छुड़ा देने से परब्रह्म को प्राप्त होकर मुक्ति के परमानन्द को भोगना चाहिये।

मोक्ष के द्वार पर चार द्वारपाल

महर्षि ऋभु का पुत्र निदाघ विद्याध्ययन के पश्चात् पिता की आज्ञा से विविध और योग साधना के केन्द्रों का भ्रमण करने गया। उसके मन में वैराग्य की भावना उत्पन्न हो गयी। यात्रा से लौटने पर उसके मन में विचार उत्पन्न हुआ कि प्राणी जगत् में उत्पन्न होते और मरते रहते हैं। यूं तो वृक्ष, कीट, पशु-पक्षी भी जीते हैं परन्तु जिसका मन परमात्मतत्त्व के चिन्तन में लगा है वस्तुत: उसी का जीवन सार्थक है। इस संसार में उन्हीं का जन्म लेना सफल है जो योगाभ्यास से अमर पद मुक्ति को प्राप्त कर लें। शेष व्यक्ति बूढ़े गधे के सदृश है-

जातास्त एव जगति जन्तव: साधु जीविता:।
ये पुनर्नेह जायन्ते शेषा जरठ गर्दभा:।। (महोपनिषद्)

हे पिता ! इस नश्वर संसार के अस्थिर भोग-ऐश्वर्यों का अवलोकन करने के पश्चात् मृगतृष्णा के जलों से आपूरित तड़ाग की ओर जैसे प्रबुद्ध हरिण दौड़ नहीं लगाते वैसे ही संसार के विषय भोगों के प्रति मुझ में आसक्ति का भाव नहीं है। इसलिये आप मुझे तत्त्वज्ञान का उपदेश दीजिये।

पुत्र की बात सुनकर ऋभु ने कहा सौम्य! ईश्वर की तुम पर महती कृपा हुई है जो विमल बुद्धि से तुमने संसार की असारता को जान लिया। संसार के दु:खों का चिन्तन करने से तुम्हारे मन में जो खिन्नता का भाव आ गया है। उसकी शुद्धि के लिए मेरी बात को ध्यानपूर्वक सुनो।

मोक्षद्वार द्वारपालाश्चत्वार: परिकीर्तिता:।
शमोविचार: सन्तोषश्चतुर्थ: साधु संगम:।।(महोपनिषद्)

मोक्ष के द्वार पर चार द्वारपाल हैं जिनके नाम हैं- शम, विचार, सन्तोष और साधुजनों की संगति। इन चारों को वश में करके ही मोक्ष पद को प्राप्त किया जा सकता है। परन्तु चारों को वश में करना कठिन कार्य है अत: इनमें से किसी एक को वश में कर लिया जाये तो शेष भी स्वत: ही आपके वश में हो जायेंगे।

प्रारम्भ में शास्त्रों का स्वाध्याय और साधुजनों की संगति तथा तप एवं इन्द्रिय निग्रह द्वारा विवेक ज्ञान प्राप्त करना चाहिये।

शम (मन की शान्ति)

यानि दु:खानि या तृष्णा दु:सहा ये दुराधय:।
शान्तश्चेत: सु तत् सर्वं तमोऽर्केष्विव नश्यति।।

दुस्सह दु:ख और जिनकी पूर्ति होना अत्यन्त कठिन कार्य है ऐसी तृष्णा का क्षय, शान्त चित्त होने पर, सूर्योदय के समय तिमिर का नाश होने के समान क्षय हो जाता है।

मातरीव परं शान्ति विषमाणि मृदूनि च।
विश्वासमिह भूतानि सर्वाणि शमशालिनि।।

जिसका मन शान्त और निर्मल हो गया है उसका माता के समान सभी विश्वास कर लेते हैं।

न रसायन पानेन न लक्ष्म्यालिंगितेन च।
न तथा सुखमाप्नेति शमेनान्तर्यथाजन:।।

लक्ष्मी (धन-ऐश्वर्य) और दिव्य रसायनों का सेवन कर लेने से भी उतनी शान्ति प्राप्त नहीं होती जितनी व्यक्ति मन को शान्त करके प्राप्त कर लेता है।

श्रुत्वा स्पृष्ट्वा च भुक्त्वा च दृष्ट्वा ज्ञात्वा च शुभाशुभम्।
न हृष्यति ग्लायति य: स: शान्त इति कथ्यते।।

जिसका चित्त शीतकाल की चान्दनी के समान स्वच्छ और निर्मल है। जो मृत्यु, उत्सव या युद्ध के समय भी व्यथित नहीं होता, उसे ही शान्त कह सकते हैं।

सन्तोषामृत पानेन ये शान्तास्तृप्तिमागता:।
आत्मारामा महात्मानस्ते महापदमागता:।।

जिनका मन सन्तोषामृत का पान करके शान्त हो गया है, जो आत्मचिन्तन में ही सुखी हैं, वे महात्मा जन ही

मुक्तिपद को प्राप्त करते हैं।

योऽन्तः शीतलतां यातो यो भावेषु न मज्जति।
व्यवहारी न संमूढ़ः स शान्त इति कथ्यते।।
(योग वशिष्ठ १३/७८)

जिसका अन्तःकरण शीतल हो गया है एवं जिसकी बुद्धि मूढ़ (मोहाच्छन्न) नहीं है तथा जो लोक व्यवहार करता हुआ भी उसमें आसक्त नही होता, उसे शान्त कहते हैं।

२.विचारः

न विचारं विना कश्चिदुपायोऽस्ति विपश्चिताम्।
विचारादशुभं त्यक्त्वा शुभमायाति धीः सताम्।।
(यो०वा० १४/५)

विद्वानों के लिये विचार से बढ़कर कोई दूसरा उपाय नहीं है क्योंकि विचार से अशुभ का त्याग और बुद्धि निर्मल हो जाती है।

यथाक्षणं यथाशास्त्रं यथादेशं यथासुखम्।
यथासम्भवसत्संगमिमं मोक्षपथ क्रमम्।।
तावद्विचारयेत् प्राज्ञो यावद्विश्रान्तिमात्मनि।३९।।

जब तक मन में शान्ति न आ जाये तब तक हर पल, शास्त्र चिन्तन, गुरुजनों का आज्ञापालन, सुविधानुसार जितना समय मिले और जहां तक सत्संग हो सके करे यही मोक्ष का पथ है।

तुर्य विश्रान्ति युक्तस्य निवृत्तस्य भवार्णवात्।
जीवतोऽजीवतश्चैव गृहस्थस्याथवा यतेः।।४०।।
नाकृतेन कृतेनार्थो न श्रुतिस्मृति विभ्रमैः।
निर्मन्दर इवाम्भोधिः स तिष्ठति यथास्थितः ।।४१।।
(महोपनिषद्)

जिसे तुरीयावस्था (समाधि) की प्राप्ति हो गई है, वासनाओं का क्षय होकर जिसे संसार सागर से छुटकारा मिल गया है, उस गृहस्थी या यति को अन्य कर्त्तव्य कर्म या शास्त्रों से कुछ प्रयोजन नहीं रह जाता। वह निस्तरंग समुद्र की भांति शान्त और गंभीर बना रहता है।

प्रत्यहं प्रत्यवेक्षेत नरश्चरितमात्मनः।
किं मे पशुभिस्तुल्यं किं वा मानवैः सह।।

व्यक्ति को प्रतिदिन अपना आत्मनिरीक्षण करना चाहिये। वह देखे कि मेरे कौन से कर्म पशुओं के समान और कौन से मनुष्योचित हैं।

आहार निद्रा भय मैथुनञ्च सामान्यमेतत् पशुभिर्नराणाम्।
धर्मो हि तेषामधिको विशेषो धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः।।

भोजन, निद्रा, भय, सन्तानोत्पत्ति ये कार्य मनुष्य और पशुओं के समान हैं। केवल धर्म ऐसा है जिसका आचरण मनुष्य कर सकते हैं पशु नहीं। धर्म के बिना मनुष्य पशु के समान है।

दीर्घ संसार रोगस्य विचारो हि महौषधम्।
आपद्वनमनम्तेहा परिपल्लविताकृतिः।।२।।
विचार कुकचछिन्नं नैव भूयः प्ररोहति।।३।।

अनन्त कामनाओं से युक्त आपद्रूप वन विचार रूपी आरे से काट दिये जाने पर पुनः वृद्धि को प्राप्त नहीं होता।

बलं बुद्धिश्च तेजश्च प्रतिपत्ति क्रियाफलम्।
फलन्त्येतानि सर्वाणि विचारेणैव धीमताम्।।६।।

बुद्धिमानों का बल, बुद्धि, तेज, कर्तव्य का ज्ञान, कार्य का फल ये सब विचार से ही फलीभूत होते हैं।

नित्यं विचार युक्तेन भवितव्यं महात्मना।
तथान्धकूपे पततां विचारो हयवलम्बलनम्।।४८।।

महापुरूषों को नित्य विचारवान्, चिन्तनशील होना चाहिये क्योंकि अन्धेरे वाले कूयें में गिर जाने पर विचार ही एक मात्र सहारा है।

कोऽहं कथमयं दोषः संसाराख्य उपागतः।
न्यायेनेति परामर्शो विचार इति कथ्यते।।५२।।

मैं कौन हूँ, यह संसार का झंझट मेरे साथ कैसे लग गया। ईमानदारी से ऐसा चिन्तन करना विचार कहलाता है।

विचाराज्जायते तत्त्वं तत्त्वाद्विश्रान्तिरात्मनि।
अतो मनसि शान्तत्वं सर्व दुःख परिक्षयः।।
(योग वा अ.१५)

विचार से तत्त्वज्ञान और तत्त्वज्ञान से आत्मा को शान्ति मिलती है इसके पश्चात् मन के शान्त होने पर सर्व दुःखों से छुटकारा मिलता है।

सन्तोष

अप्राप्तं हि परित्यज्य सम्प्राप्ते समतां गतः।
अदृष्ट खेदाखेदो यः सन्तुष्ट इति कथ्यते।।

जो व्यक्ति अप्राप्त की इच्छा नहीं करता, प्राप्त वस्तु में भी समत्वं का भाव रखता है तथा जो दुःख या सुख के विषय उपस्थित होने पर भी विकार को प्राप्त नहीं होता, उसे ही सन्तुष्ट कहा जा सकता है।

नाभिनन्दत्यसम्प्राप्तं प्राप्तं भुङक्ते यथेप्सितम्।
यः स सौम्य समाचारः सन्तुष्ट इति कथ्यते।।

जो अप्राप्त वस्तु के स्वप्न नहीं देखता अथवा अप्राप्त वस्तु को प्राप्त करने के लिये मन के मोदक नहीं बनाता, प्राप्त वस्तु का ही उपभोग प्रसन्नचित्त होकर करता है तथा जिसका स्वभाव शान्त और आचार व्यवहार साधुजनोचित है, उसे ही सन्तुष्ट कहा जा सकता है। (महोपनिषद्)

सन्तोषादनुत्तमः सुखलाभः (योग०)

सन्तोष से अनुत्तम अर्थात् जिससे उत्तम और दूसरी वस्तु नहीं, ऐसा सुख प्राप्त होता है।

गोधन गजधन वाजिधन और रत्नधन खान।
जब आवे सन्तोष धन सब धन धूलि समान।।

यच्च काम सुखं लोके यच्च दिव्यं महत् सुखम्।
तृष्णाक्षयसुखस्यैते नार्हतः षोडशीं कलाम्।।

जितने भी लौकिक सुख या योग सिद्धियाँ है, तृष्णा को क्षय हो जाने पर जो सुख प्राप्त होता है, उसके सोलहवें भाग के बराबर भी नहीं ठहरते।

श्रुत्वा स्पृष्ट्वा च भुक्त्वा च दृष्ट्वा ज्ञात्वा च शुभाशुभम्।
न दृष्यति ग्लायति य सः शान्त इति कथ्यते।।

जिसका चित्त शीतकाल की चांदनी के समान स्वच्छ है जो किसी वस्तु को देखकर, छूकर, खाकर या उसके विषय में सुनकर न तो प्रसन्न होता है और न ही ग्लानि या घृणा करते हैं। उसी को शान्त कहा जा सकता है।

सन्तोषामृत पानेन ये शान्तातृप्तिमागताः।
भोग श्री रतुला तेषामेषा प्रति विषायते।।

(योग वा.अ.१५)

जो शान्त पुरूष सन्तोषामृत के पाने से पूर्णतः तृप्त है, उसके लिये अतुल भोग विलास की वस्तुयें विष के समान जान पड़ती है।

सन्तोषशीतलं चेतः शुद्ध विज्ञान दृष्टिभिः।
भृशं विकासमायातिं सूर्यांशुरिवाम्बुजम्।।

जैसे सूर्य की किरणों के स्पर्श से कमल का पुष्प विकसित हो जाता है वैसे ही जिसकी दृष्टि शुद्ध विज्ञान से मुक्त और सन्तोष से जिसका चित्त शीतल या शान्त हो गया है उसका हृदय रूपी कमल भी खिल उठता है।

आशा वैवश्ये विवशे चित्ते सन्तोष वर्जिते।
म्लाने वक्त्रमिवादर्शे न ज्ञानं प्रतिबिम्बति।।

जैसे मलिन दर्पण में मुख नहीं दीखता वैसे ही आशा की परवशता से व्याकुल एवं सन्तोष रहित चित्त में ज्ञान प्रतिबिम्बित नहीं होता।

सन्तोषामृत पूर्णस्य शान्त शीतलया धिया।
स्वयं स्थैर्यं मनो याति शीतांशोरिव शाश्वतम्।।
समतया मतया गुणशालिना पुरूषरादिह यः समलंकृतः।
तममलं प्रणमन्ति न भश्चरा अपि महामुनयो रघुनन्दन।।

(योग वा.अ. १५)

जिसकी मति गुणों से युक्त और समत्व गुण वाली हो गयी है, उस निर्मल मतिमान् को देवता भी प्रणाम करते हैं।

साधु सङगम

दूर पूर्णेन वसति दूर अनेन हीयते।
महद्यक्षं भुवनस्य मध्ये तस्मै बलिं राष्ट्रभृतो भरन्ति।

(अथर्व. १०/८/१५)

पूर्ण के साथ ज्ञानी और विद्वान् के सम्पर्क में रहने से मनुष्य उन्नति को प्राप्त होता है और वह सामान्य लोगों से दूर रहता है। इसी भांति हीन, मूर्ख मनुष्य के साथ रहने से पतित हो जाता है।

स्वस्ति पन्थामनुचरेम सूर्याचन्द्रमसाविव।
पुनर्ददताघ्नता जानता संगमेमहि।।

सूर्य चन्द्र के समान हम कल्याण के मार्ग पर चलें और दानी, सरल, ज्ञानी पुरूष की संगति करें।

यजाम देवान् यदि शक्नुवाम्। ऋ. १/२७/१३

जहां तक बन सके हम देवों की संगति करें।

चन्दनं शीतलं लोके चन्दनादपि चन्द्रमा।
चन्दनचन्द्रयोर्मध्ये शीतला साधु संगतिः।।

चन्दन शीतल है। चन्द्रमा की किरणें चन्दन से भी अधिक शीतल है। चन्दन, चन्द्रमा से भी अधिक साधुजनों की संगति शीतलता देने वाली है।

यः स्नातः शीत सितया साधुसंगत गंगया।
किं तस्य दानैः किं तीर्थैः किं तपोभिः किमध्वरैः।।

जिसने साधु जनों की शीतलता देने वाली पावन गंगा में स्नान किया है उसका दान, तीर्थ, तप और यज्ञादि करना किस काम का?

सन्तोषः परमोलाभः सत्संगः परमागतिः।
विचारः परमं ज्ञानं शमो हि परमं सुखम्।।

सन्तोष सबसे अधिक लाभप्रद, सत्संग परम पद को प्राप्त कराने वाला, विचार परम ज्ञान और मन की शान्ति सबसे बड़ा सुख है।

विवेकः परमोदीपो जायते साधु संगमात्।
मनोहरोऽवलो नूनमासेकादिव गुच्छकः।।

साधुजनों की संगति से विवेक दीप प्रज्वलित होता है जो मनोहर और उज्ज्वल गुलदस्ते जैसा प्रतीत होता है।

जाड्यं धियो हरति सिञ्चति वाचि सत्यम्,
मानोन्नतिं दिशति पापमपा करोति।
चेतः प्रसादयति दिक्षु तनोति कीर्तिं
सत्संगतिः कथय किं न करोति पुंसाम्।।

सत्संगति बुद्धि की जड़ता को दूर करती है, वाणी में सत्यता लाती है, व्यक्ति का सम्मान बढ़ाती है और पापों का निवारण करती है। चित्त निर्मल हो जाता है चारों दिशाओं में कीर्ति होती है। सत्संगति पुरूषों के लिये आखिर क्या नहीं करती? अर्थात् सब कुछ करती है।

महाजनस्य संसर्गः कस्य नोन्नतिकारकः।
पद्मपत्र स्थितं वारि धत्ते मुक्ताफलश्रियम्।।

महापुरूष की संगति किसकी उन्नति नहीं कराती? कमल के पत्ते पर स्थित पानी की बून्द मोती के समान शोभायमान होती है।

-आचार्य, गुरुकुल-पौन्धा, देहरादून

हम आर्यवीर, आर्यवीर,आर्यवीर हैं

-श्री वीरेन्द्र कुमार राजपूत,
देहरादून

हम आर्यवीर, आर्यवीर,आर्यवीर हैं,
अति ही चरित्रवान्, कान्तिवान् हीर हैं।।
रक्षक हैं आर्य-जाति,आर्य-सभ्यता के हम,
इसको मिटाए कोई,नहीं है किसी में दम,
वैदिक प्रचार क्षेत्र के, हम ही सफीर हैं।।

घर-घर को करते शुद्ध नहीं मैल व्याप्त है,
अश्लीलता समाज से, करते समाप्त हैं,
जब तक न लक्ष्य प्राप्त हो, धरते न धीर हैं।।

बलिदान याद हमको, देव दयानन्द का,
बलिदान भगतसिंह, और श्रद्धानन्द का ,
उन-सी समय-शिला पे, खेंचते लकीर हैं।।

आंतकियों के वास्ते,हम वीर राम हैं,
हम ही अनीति के, विनाश हेतु श्याम हैं,
उन से चरित्रवान्, कान्तिवान् हीर हैं।।

वैदिक-ज्ञान-मंजुषा

❑ ब्र. प्रद्युम्नार्य.....✍

प्रश्न : वेद शब्द किन-किन धातुओं से बना है?

उत्तर : वेद शब्द विद् सत्तायाम्, विदलृ लाभे, विद् ज्ञाने, विद् विचारणे, विद् चेतनाख्यायां भागविप्सासु इन पाँच धातुओं से बना हुआ है।

प्रश्न : वेद शब्द का क्या अर्थ है व वेद कितने है नाम लिखें :-

उत्तर : वेद शब्द का अर्थ ज्ञान है। वेद चार होते हैं। १. ऋग्वेद, २. यजुर्वेद, ३. सामवेद, ४. अथर्ववेद।

प्रश्न : वेदों के रचयिता कौन हैं? भारतीय विद्वानों की दृष्टि में लिखें :-

उत्तर : भारतीय विद्वानों की दृष्टि में वेद ईश्वरीय ज्ञान है, जिनका आविर्भाव ऋषियों के हृदय में ईश्वरीय प्रेरणा से हुआ है। ऋग्वेद का ज्ञान अग्नि ऋषि को, यजुर्वेद का ज्ञान वायु ऋषि को, सामवेद का ज्ञान आदित्य ऋषि को और अथर्ववेद का ज्ञान अंगिरा ऋषि को हुआ था।

प्रश्न : वेदों के रचनाकाल के सम्बन्ध में भिन्न मत कौन-कौन से हैं?

उत्तर : १. भारतीय विद्वानों की दृष्टि में वेदों को नित्य ईश्वरीय वाणी माना जाता हैं। सृष्टि के रचना के साथ ही इनका ज्ञान चार ऋषियों के माध्यम से संसार को दिया गया।

२. साधारणत: यूरोप-निवासी वेदों का रचनाकाल ईसा से २५०० वर्ष पूर्व मानते हैं।

३. भूगर्भ-शास्त्री ईसा से दस-बीस सहस्त्र वर्ष पूर्व वेदों की रचना का काल मानते हैं।

४. मैक्समूलर ने पहले ई.पू. १२०० वर्ष और फिर ३००० वर्ष का समय माना है।

५. तिलक तथा जैकब वेदों की रचना का काल ज्योतिष के आधार पर २५०० से ४००० ई.पू. तक मानते हैं।

प्रश्न : वेदों का रचयिता विदेशी विद्वानों की दृष्टिकोण में कौन है?

उत्तर : विदेशी विद्वानों के अनुसार सूक्तों अथवा मन्त्रों के ऊपर जिन ऋषियों के नाम दिये गये हैं, वे ही उनके रचयिता हैं।

प्रश्न : वेदत्रयी से क्या तात्पर्य है?

उत्तर : वेदत्रयी से अभिप्राय है - ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा सामवेद। इन तीनों वेदों के विषय क्रमश: हैं-ज्ञान, कर्म और उपासना। इसीलिए इनको वेदत्रयी कहा जाता है।

प्रश्न : संसार की प्राचीनतम भाषा का नाम क्या है?

उत्तर : संसार की सबसे प्राचीनतम भाषा देववाणी है, जो वेदों में स्थित है। इसी वाणी में कुछ विभिन्नताओं को मिलाकर लोकव्यवहार के लिए निश्चित किया गया जिसे संस्कृत कहते हैं।

प्रश्न : यूरोप, मध्य एशिया, ईरान और इराक की भाषाओं की उत्पत्ति किस भाषा से हुई है?

उत्तर : यूरोप, मध्य एशिया, ईरान और इराक की भाषाओं की उत्पत्ति संस्कृत भाषा से हुई है। **शेष अग्रिम अंक में..**

भावनाओं का स्वरूप

-अक्षय कुमार

भावनाएँ बड़ी विशाल होती हैं। भावनाओं के आधार पर ही हम प्राणी परस्पर व्यवहार करते हैं। जो भावनाओं के महत्त्व को समझ गया वह समझो इस बन्धरूपी संसार से मुक्त हो गया। इसलिए हम समझने का प्रयास करेंगे कि भावनाओं में आखिर क्या शक्ति है, जो इस संसार में हमें किसी का प्रिय बना देती हैं, किसी का अप्रिय, किसी का मित्र, किसी का दुश्मन आदि-आदि। संसार में ऐसा भी देखा गया है कि कोई किसी की भावनाओं में इतना ज्यादा आकृष्ट हो जाता है कि वह अपने बारे में सोचता तक नहीं।

यह एक वैज्ञानिक सत्य है कि जैसा भाव हमारे मन में सामने वाले के प्रति होता है वैसा ही सामने वाले के मन में भी होता है। यदि हम किसी के प्रति दुष्टता का विचार अपने मन में लायेंगे तो वैसा ही विचार वह भी हमारे लिए अपने मन मे लायेगा। इसलिए दुसरों के प्रति हितकर भावों को जागृत करें। इस प्रसंग में एक आख्यान स्मरण हो उठता है-कहते है कि एकबार राजा भोज की सभा में एक व्यापारी ने प्रवेश किया। राजा ने उसे देखते ही उनके मन में आया कि इसका सब कुछ छीन लिया जाना चाहिये।

व्यापारी के जाने के बाद राजा ने सोचा-मैं प्रजा को हमेशा न्याय देता हूँ। आज मेरे मन में यह कालुष्य क्यों आ गया कि व्यापारी की सम्पत्ति छीन ली जाय? उसने अपने मन्त्री को पास आहुत कर पूछा कि ये विचार मेरे मन में कैसे आ गये? मन्त्री ने कहा कि- इसका सही उत्तर मैं कुछ समय के पश्चात् दूँगा।

मन्त्री विलक्षण बुद्धि का था। वह इधर-उधर के सोच-विचार में समय न खोकर सीधा व्यापारी से मैत्री गाँठने के लिए पहुँच गया । व्यापारी से मित्रता करके पूछा कि तुम इतने चिन्तित क्यों हो? तुम तो भारी मुनाफे वाले चन्दन के व्यापारी हो।

व्यापारी बोला-धारा नगरी सहित अनेक नगरों में चन्दन की गाड़ियाँ भरे फिर रहा हूँ, पर चन्दन नहीं बिक रहा। बहुत सारा धन इसमें फँसा पड़ा है। अब नुकसान से बच पाने का कोई उपाय नहीं है। व्यापारी की बातें सुनकर मन्त्री ने पूछा-क्या कोई रास्ता नहीं बचा? व्यापारी हँसकर बोला-अगर राजा भोज की मृत्यु हो जाये तो उनके दाह-संस्कार के लिये सारा चन्दन बिक सकता है।

मन्त्री को राजा का उत्तर देने की सामग्री मिल चुकी थी। अगले ही दिन मन्त्री ने व्यापारी से कहा-तुम प्रतिदिन राजा का भोजन पकाने के लिए एक मन चन्दन दे दिया करो और नगद पैसे भी उसी समय ले लिया करो। व्यापारी मन्त्री के आदेश को सुन कर बड़ा प्रसन्न हुआ। वह मन-ही-मन राजा को शतायु (लम्बी आयु) होने की कामना करने लगा।

एक दिन राजा की सभा चल रही थी। व्यापारी दोबारा राजा को वहाँ दिखायी दे गया तो राजा सोचने लगा कि कितना आकर्षक व्यक्ति है, बहुत परिश्रमी है। इसे कुछ उपहार देना चाहिए।

राजा ने पुनः मन्त्री को बुलाकर कहा कि हे मन्त्रीवर! यह व्यापारी प्रथम बार आया था, उस दिन मैंने सवाल किया था, उसका उत्तर तुमने अभी तक नहीं दिया। आज इसे देखकर मेरे मन की भावनाएँ परिवर्तित हो गई हैं, जिससे मेरे मन में अनेको प्रश्न उत्पन्न हो रहे हैं। इसे दूसरी बार देखा तो मेरे मन में इतना परिवर्तन कैसे हो गया?

मन्त्री ने उत्तर देते हुए कहा - महाराज! दोनो ही प्रश्नों के उत्तर आज ही दे रहा हूँ। यह पहले आया था तब आपकी मृत्यु के विषय में सोच रहा था। अब यह आपके जीवन की कामना करता है, इसीलिए आपके मनमें इसके प्रति दो प्रकार की भावनाओं को उदय हुआ है। इससे सिद्ध होता है कि हम जैसी भावना किसी के प्रति रखेंगे वैसी ही भावना वह व्यक्ति हमारे प्रति रखेगा।

-गुरुकुल-पौन्धा, देहरादून

साईं बाबा का विरोध कितना सही कितना गलत

-डॉ. विवेक आर्य

साईं बाबा के नाम को सुर्खियों में लाने का श्रेय शंकराचार्य स्वामी स्वरूपानंद जी को जाता हैं जिनका कहना हैं की साई बाबा की पूजा हिन्दू समाज को नहीं करनी चाहिए क्योंकि न साई ईश्वर के अवतार हैं न ही साई का हिन्दू धर्म से कुछ लेना देना हैं। साई बाबा जन्म से मुसलमान थे और मस्जिद में रहते थे एवं सबका मालिक एक हैं, कहते थे। शंकराचार्य जी का कहना हैं कि ओम साई राम में राम नाम के साथ साईं का नाम जोड़ना गलत हैं और जो राम का नाम लेते हैं वे साई का नाम कदापि न ले, यह हिन्दू धर्म की मान्यताओं के विरुद्ध हैं। कुछ लोग शंकराचार्य जी की दलीलों को सही ठहरा रहे हैं क्योंकि साई बाबा के नाम के साथ मुसलमान शब्द का जुड़ा होना उनके लिए असहनीय हैं जबकि कुछ लोग जो अपने आपको साई बाबा का भगत बताते हैं शंकराचार्य जी के विरोध में उनके पुतले फूंक रहे हैं।

हमें यह जानना आवश्यक हैं की साई बाबा का पिछले एक दशक में इतने अधिक प्रचलित होने के पीछे क्या कारण हैं? क्या कारण हैं कि एका-एक हिन्दू मंदिरों में साई बाबा की मूर्ति सबसे बड़ी होने लगी और शेष हिन्दू देवी देवता उसके समक्ष बौने दिखने लगे हैं? क्या कारण हैं कि प्राय: हर हिन्दू के घर में वेद, रामायण, गीता, आदि के स्थान पर साई आरती के गुटके पाये जाते हैं? क्या कारण हैं की राम और कृष्ण के नामों से अपने बच्चों का नामकरण करने वाले हिन्दू लोग साई के नाम से अपने बच्चों को पुकारने में गर्व करने लगे हैं? उत्तर स्पष्ट हैं की सामान्य जन साई बाबा द्वारा चमत्कार करने, बिगड़े कार्य बनाने, अधूरे काम बनाने, व्यापार, नौकरी, संतान प्राप्ति, प्रेम सम्बन्ध आदि कार्यों में सफलता प्राप्ति करने हेतु करते हैं। अगर विस्तृत रूप से देखा जाये तो हिन्दू समाज में जितनी भी पूजा-उपासना की विधियाँ प्रचलित हैं उनका लक्ष्य ईश्वर प्राप्ति नहीं अपितु जीवन में सफलता प्राप्ति अधिक हैं। जैसे कोई तीर्थों में, कोई पहाड़ों में, कोई नदियों में, कोई जीवित गुरुओं के चरणों में या गुरु नाम में , कोई मृत गुरुओं के चित्र और वस्तुओं में, कोई पीरों में, कोई कब्रों में, कोई निर्मल बाबा के गोलगप्पों में, कोई व्रत कथाओं में, कोई हवनों में, कोई पुराणों के महात्म्य में, कोई निरीह पशुओं की बलि में, कोई आडम्बरों में, कोई गंडा-तावीज में सफलता की खोज कर रहा हैं। वैसे हिन्दुओं के समान मुस्लिम समाज भी मक्का मदीना से लेकर दरगाहों और कब्रों में तो ईसाई समाज भी प्रार्थना रूपी पूजा, ईसाई संतों के चमत्कारों में सफलता खोज रहा हैं। सत्य यह हैं की हिन्दू समाज की ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव से अनभिज्ञता, चमत्कार को कर्म-फल व्यवस्था से अधिक महत्ता , वेदादि शास्त्रों में वर्णित ईश्वर की पूजा करने सम्बन्धी अज्ञानता इस अव्यवस्था के लिए मुख्य रूप से दोषी हैं। खेद हैं कि शंकराचार्य जी भी इस समस्या का समाधान करने में विफल हैं क्यूंकि उनके अनुसार साई के स्थान पर गंगा स्नान और राम नाम के स्मरण से ईश्वर की पूजा करनी चाहिए।जब तक सर्वव्यापक, अजन्मा, सर्वज्ञानी, सर्वशक्तिमान एवं निराकार ईश्वर की सत्ता में पूर्ण विश्वास नहीं होगा तब तक धर्म के नाम पर इसी प्रकार से पाखंड फैलते रहेंगे। जब तक मनुष्य को यह नहीं सिखाया जायेगा कि हम ईश्वर की उपासना इसलिए करते हैं ताकि अनादि ईश्वर के सत्यता, न्यायकारिता, निष्पक्षता, दयालुता जैसे गुण हमारे में भी प्रवृष्ट हो जायें, जब तक मनुष्य ऐसा नहीं करेगा, तब तक मनुष्य इसी प्रकार से सफलता प्राप्ति के लिए विभिन्न प्रकार के अंधविश्वासों में भटकता रहेगा। जब तक मनुष्य को यह नहीं सिखाया जायेगा की जीवन का उद्देश्य आत्मिक उन्नति कर मोक्ष की प्राप्ति हैं तब तक मनुष्य अपने आपको भ्रम में रखकर दु:ख भोगता रहेगा।

इसलिए केवल साई बाबा का विरोध इस समस्या का समाधान नहीं हैं अपितु वेद विदित सत्य के प्रचार से ही इस समस्या का समाधान संभव हैं। **-दिल्ली**

दान

-रवि आर्य

जिस समय,जिस व्यक्ति को जिस वस्तु की आवश्यकता है उसे उसी समय वही वस्तु दी जाने की क्रिया को दान कहा जाता है। दान देना हमारी संस्कृति का एक अमूल्य अङ्ग है। दान देने की परम्परा को ऋग्वेद में निरुपित करते हुए कहते है कि **'शत हस्त समाहार सहस्त्र हस्त सं किर '** अर्थात् सैकड़ों हाथों से धन कमाओं और हजारों हाथों से दान करो। दान किसको दिया जाए इसके उत्तर में हमें ज्ञात होता है कि दान लेना ब्राह्मणों का शास्त्रसम्मत अधिकार है परन्तु वहीं यह भी निरुपित किया गया है कि दान सुपात्र को ही दिया जाए, जिससे कोई दुरुपयोग न हो सके। प्रतिग्रहीता की पात्रता पर विशेष बल देते हुए याज्ञवल्क्य जी कहते हैं कि सभी वर्णों में ब्राह्मण श्रेष्ठ, ब्राह्मणों में भी वेद का अध्ययन-अध्यापन करने वाले श्रेष्ठ हैं, उनमें भी वेदनिष्ठ श्रेष्ठ क्रियाओं कर्म करने वाले को दान देना चाहिए। समय पर यथोचित पदार्थ मिले। यही दान की सच्ची पात्रता है। जैसे कोई भूखा हो तो उसे भोजन आदि खाद्य पदार्थ देकर तृप्त कराना चाहिए, प्यासे को पानी पिलाना चाहिए, वस्त्रहीन को वस्त्र देने चाहिए, रोगी को औषधी देनी चाहिए, विद्याभिलाषी को विद्या का दान कराना चाहिए परन्तु दान की क्रिया में लिप्सता कदापि नहीं होनी चाहिए।

दान बड़ी श्रद्धा व भक्ति के साथ देना चाहिए। क्योंकि ये सारी धन-सम्पत्ति जो हमारे पास है, वह सब उस परमपिता परमेश्वर की दया से हमें प्राप्त हुई है। मैं जो दान कर रहा हूँ वह थोड़ा है, इस संकोच से दान देना चाहिए।

दान करने से इहलोक व परलोक दोनों में ही कल्याण मार्ग का पथिक बनता है। सुख सम्पन्नता से परिपूर्ण होकर सुखमय जीवन का मनुष्य लोग आनन्द लेते है। दरिद्रता को दूर करने का अमोघ शस्त्र है दान। दरिद्रता आदि दु:खों से छूटे रहने का यही एक मात्रसाधन है। दानशीलपुरुष या स्त्री किसी भूखे प्यासे, तिरस्कृतों का पालन-पोषण करके उन्हें तृप्त करते हैं तो वो सदैव प्रसन्नता को प्राप्त करते हैं। वे सदा ही अपने जीवन में आनन्दित रहते हैं।

-गुरुकुल पौन्धा, देहरादून

आओ विचार करें

ब्र. प्रताप आर्य

विश्व विजय के लोभी दानव
इस जीवन को न ठुकराओ।
विधि की दी अनुपम धरती पर
खूनी पताका न फहराओ।।१।।
मचा घोर कोहराम देश में
अब तो आँखे खोलो।
जाग उठो भारत के सपूतो
अब तो देश बचालो।।२।।
भारत माँ पर कष्ट पड़े
कुछ कर दिखलाओ।
क्रान्ति करने निकले हो तो
पहले अपना शीश चढ़ाओ।।३।।
लूट रहे भ्रष्ट देश को,
उनसे राष्ट्र बचाओ।
अग्नि की ज्वाला में तपकर,
तुम कुन्दन प्र-ताप बन जाओ।।४।।

-गुरुकुल पौन्धा, देहरादून

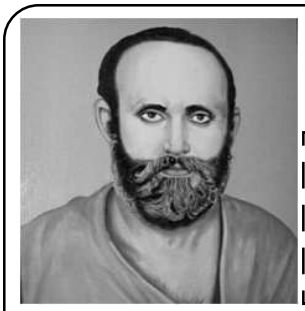

अथ श्री ओमानन्द लहरी

– **आचार्य यज्ञवीर व्याकरणाचार्य**

| सहृदया:! पाठका: पत्रिकाया: अस्मिन् संस्कृतभागे श्री ओमानन्दलहरी नामकं| पुस्तकं गतनवम्बरमासात् प्रभृति क्रमश: प्रकाश्यते। श्लोकानामार्यभाषा अपि| आचार्यधनञ्जयकृता सहैव प्रकाश्यते येन बोधगम्यता स्यादिति – **कार्यकारिसम्पादक:** |

क्रमश:.....

आभास: गुरोर्जीवन सत्कथा कीदृशीति वर्ण्यते

भावपूरितसुन्दरी रचना सुमङ्गलकारिणी,
सत्कृति: विमला सती रुचिरास्तु सा विबुधप्रिया।
ब्रह्मचर्यविकासिनी भवतात् सुजीवनसत्कथा,
सत्कवे: कवितेव सा सुखदायिनी रसनन्दिनी।।६९।।

व्याख्या– भावपूरितसुन्दरी भावैर्भरिता , आप्ययिताशोभना रचना=कृति:,समुङ्गलकारिणी सा सत्कृति: =सा शोभना निर्मिति: विमला=मलरहिता पवित्रा सती=भवती विबुधप्रिया= विदुषां प्रिया, रुचिरा= शोभना रुचिप्रदा (रुचिं राति ददाति इति)ब्रह्मचर्यविकासिनी=ब्रह्मचर्यस्य विकासकारिणी सुजीवनसत्कथा= सुन्दरस्य जीवनस्य सत्या आख्यायिका, सत्कवे: कवितेव =कविकोविदस्य रचनेव सा सुखदायिनी=सौख्यप्रदा रसनन्दिनी=रसास्वादिनी च भवतात्=भवतु इति। अस्य छन्दो विबुधप्रिया अस्ति तस्य लक्षणम्'' विबुधप्रिया रसौ जौ भ्रौ वसुदिश:'' छन्दशास्त्र ५–१६ ।।६९।।

आर्यभाषा–सुन्दर भावों से भरी हुई,सब का कल्याण करने वाली सुन्दरी रचना , रुचिप्रद एवं विद्वज्जनों को प्रिया हो, ब्रह्मचर्य विषयक विचारों को विकसित पुष्ट करने वाली, सुन्दर जीवन की सच्ची गाथा,विद्वान् कवि की कविता की भाँति वह सौख्यप्रदा व रसास्वादिनी होवे।।६९।।

आभास– काव्यारम्भदिवसमाचष्टे श्लोकद्वयेन –

अङ्कर्तुंविभुनेत्रेऽब्दे, चतुर्दश्यां शनौ दिने।
कार्तिककृष्णपक्षे वै, ग्रन्थारम्भ: कृतो मया।।७०।।
दयानन्दस्य निर्वाणे, दीपावलीदिने शुभे।
श्रद्धया स्वगुरुन्नत्वा, लिख्यते श्रीगुरोर्यश:।।७१।।

व्याख्या– एकोनसप्तत्युत्तरद्विसहस्रतमे विक्रमाब्दे चतुर्दश्यां तिथौ शनिवासरे! कार्तिकमासस्य कृष्ण पक्षे मया ग्रन्थस्य लेखनारम्भ: कृत:।।७०।।

महर्षेर्दयानन्दस्य निर्वाण दिवसे, दीपावल्या: शुभदिवसे निजगुरुन् परया श्रद्धया प्रणम्य श्री गुरो: = श्रीमतो गुरुवर्यस्य ओमानन्दस्य यशोगाथा '' श्री ओमानन्द लहरी लिख्यते।। ७१ ।।

आर्यभाषा– विक्रमी संवत् २०६९ तिथि चतुर्दशी शनिवार के दिन कार्तिकमास के कृष्णपक्ष में मैंने यह ग्रन्थ लिखना प्रारम्भ किया ।। ७०।। महर्षि दयानन्द के निर्वाण दिवस दिवाली के शुभदिन अपने गुरुजनों को श्रद्धा से प्रणाम करके ''श्री ओमानन्द जी सरस्वती की यशोगाथा ''श्री ओमानन्द लहरी लिखनी प्रारम्भ की।।७१ ।।

आभास –सम्पूर्तिदिवसं कदा इत्याचष्टे एकोनसप्तत्युत्तर द्वितहस्रतमे विक्रमाब्दे माघमासे शुक्लपक्षे द्वादश्यां तिथौ बुधवासरे ग्रन्थ श्री ओमानन्द लहरी इत्याख्य पूर्ति समागत:। नेतु: सुभाषचन्द्रस्य पवित्रतमे जन्मदिवसे मया प्रसन्नतया सावहितेनचेतसा ग्रन्थ: पूर्ण: कृत: इति ।।७२–७३।इति हरयाणा प्रान्तार्न्तगत रोहतक मण्डलस्य किसरैं टी ग्रामवासिना,आर्य भीमसिंहस्यात्मजेन, बलदेवशिष्येण, नान्हीदेवीनन्दनेन,यज्ञवीरेण,प्रणीतया भैमिरित्याख्यया संस्कृत व्याख्यया विभूषिता आर्यमनोविनोदिन्यां आचार्य धनंजयकृतया भाषाटीकया समेता श्री ओमानन्द लहरी पूर्णतामगात्।।७२–७३।।

आर्यभाषा– २०६९ विक्रम संवत् के माघमास के शुक्ल पक्ष द्वादशी तिथि बुधवार को यह ग्रन्थ श्री ओमानन्द लहरी पूर्ण हुआ। नेता जी सुभाष चन्द्र बोस के पवित्र जन्म दिन २३ जनवरी २०१३ प्रसन्नता पूर्वक पूर्ण मनोयोग से यह श्री ओमानन्द लहरी ग्रन्थ पूर्ण किया।।**७२–७३।।**

ग्रन्थपूर्तितिथि: १२ माघ सम्वत् २०६९ तदनुसारं २३ जनवरी सन् २०१३

गुरूकुल

- ब्र. गौरव आर्य

खग कुञ्ज निनाद निनादित कानन को करता हर वक्त जहाँ,
कपि पुञ्ज सदा स्वरथाङ्गन से, कलरव करता तरु शिखरों पर।
कुट शाल तमाल समान लगे न लगे कुट ताल कहीं पर भी ,
उस शान्त सरोवर निष्कुट में इक गुरूकुल कोकनदोवत् था॥

सरिता बहती इक पूरब में कल-कल कल निज जल से करती,
बहती वह उत्तर से दक्खिन दक्खिन से मनु उत्तर को ड़रती।
चहुँ ओर विशाल पहाड़ खड़े उन पर पत्थर के खण्ड़ पड़े,
तरू लेकर के लघु से गुरू भी मनु सैनिक बन तैयार खड़े॥

वह गुरूकुल बिसवत् ही तो सदा खिलता था ज्ञान विरोचन से,
वटु थे उसमें मधुलिड़ की तरह चलते फिरते मंडराते से ।
वे ज्ञान मधु को पीकर के विद्वान् समान प्रफुल्लित थे,
उनके कर वृन्दरविन्दों से गुरू के पद वृन्द सुवन्दित थे॥

जगते नित दिष्ट विभात हि में करते निज ईश्वर का वन्दन,
जब वे करते व्यायाम मनु पवमान पुनीत उन्हें करता।
फिर अग्निहोत्र का पावक भी करता था शमन सब पापों को,
इस भाँति स्वजीवन में वे सदा करते थे सुखों का अभिनन्दन॥

जनु सूरज चञ्चल पुञ्ज मरीचि से वटु चञ्चलता हरता,
मनु होत सहायक है उनका ईशोचित कला कलापों में ।
शशलाञ्छन ही मनु लाञ्छित है उनके सब लाञ्छन हरने को,
क्योंकि जब लाञ्छन है ही नहीं वे कुन्दन द्रव्यकलापों में ॥

विद्या श्रृंगार सदा करते करते है हास सुचर्चा पर,
करते करूणा सब जीवों पर है रौद्र सदा औ दुष्टों पर।
वे वीर शास्त्र समराङ्गण में किल्विष के लिए है भयानक भी,
मतिमूढ़ बिभत्स तथा अद्भुत गतिमान् सुशस्त्र विधा में भी ॥

जहँ जावत शास्त्र विवादों में तहँ विजय-श्री को प्राप्त किए,
शिवशिष्य सदा जनु लौटत है यश को गुरु के सुप्रशस्त किए,
उनके मुख पद्म प्रफुल्लित से ब्रह्मोज रूप रवि किरणों से,
इक '**गौरव**' भाव सदा बहता च सुनीत नयन युग झरनों से।।

-गुरुकुल-पौन्धा, देहरादून (उ०ख०)

वेदार्ष-महाविद्यालय-न्यास की विभिन्न गतिविधियाँ
संस्था समाचार

सवा करोड़ गायत्री यज्ञानुष्ठान, एवं चतुर्वेद ब्रह्मपारायण महायज्ञ

पूज्य स्वामी चित्तेश्वरानन्द जी के मार्गदर्शन में गुरुकुल यमुनातट मंझावली फरीदाबाद (हरयाणा) में सवा करोड़ गायत्री यज्ञानुष्ठान एवं चतुर्वेद ब्रह्मपारायण महायज्ञ का आयोजन ४ अक्टूबर २०१४ से आरम्भ होकर ८ मार्च २०१५ तक चलेगा। इस यज्ञ का आयोजन आचार्य विद्यादेव जी के ब्रह्मत्व में होगा। इसके संरक्षक संस्था के संस्थापक स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती जी महाराज होंगे। यज्ञ का संयोजन आचार्य जयकुमार जी करेंगे। आर्य जगत् के मूर्धन्य त्यागी-तपस्वी, साधु-संन्यासी, विद्वान्, एवं अनेक साधक जन इस महा आयोजन की शोभा बढ़ायेंगे। आप सभी भी इस आयोजन का पूर्ण लाभ लेकर आत्म-ज्ञान की पिपासा को शान्त कर सकते हैं। इस आयोजन में उन पुरुष व महिलाओं को वरीयता दी जायेगी, जो सम्पूर्ण समय इस आयोजन में रहेंगे। इससे अतिरिक्त जनों के लिए स्थानानुसार व्यवस्था दी जायेगी। आयोजन में भाग लेने वाले शिविरार्थी किसी भी धर्म सम्प्रदाय के हो सकते हैं किन्तु शराब, बीड़ी, गुटखा आदि हानिकारक पदार्थों के सेवन से रहित होने चाहिए अथवा इन पदार्थों को छोड़ने का संकल्प लें। अधिक जानकारी के लिए हमारी वेबसाईट-www.pranwanand.org या Facebook/Gurukulpoundha पर भी लॉग इन कर सकते हैं।

निवेदक : स्वामी चित्तेश्वरानन्द सरस्वती

गुरुकुल गौतम नगर में बृहद् वृष्टि यज्ञ सम्पन्न

श्रीमद् दयानन्द-वेदार्ष-महाविद्यालय गुरुकुल गौतम नगर, नई दिल्ली में १३ जूलाई से १६ जूलाई २०१४ तक बृहद् वृष्टि यज्ञ का आयोजन किया गया। यज्ञ के ब्रह्मा सार्वदेशिक आर्यवीर दल के प्रधान सेनापति डॉ. देवव्रत सरस्वती जी रहे। यज्ञाध्यक्ष संस्था संस्थापक स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती जी थे। वृष्टि यज्ञ में अथर्ववेद के मन्त्रों से अनेक नर-नारियों ने आहुतियाँ प्रदान की। वृष्टि यज्ञ के आरम्भ होने के तीन घण्टें बाद ही वृष्टि होनी आरम्भ हो गई। जबकि इससे पहले दिल्ली में वर्षा नहीं हो रही थी। इसी यज्ञ के प्रभाव से दिल्ली में वर्षा का प्रारम्भ हो गया है। स्वामी देवव्रत सरस्वती जी ने कहा कि वर्तमान में मानवीय कारणों से पर्यावरण में बहुत से अवांछित परिवर्तन हुए हैं, जिसका सीधा-साधा दुष्प्रभाव मानसून एवं वर्षा पर हुआ है। ऐसे में विश्व भर में स्थान-स्थान पर वृष्टि यज्ञों का अनुष्ठान करना चाहिए। क्योंकि यज्ञ न सिर्फ पर्यावरण की रक्षा करता है अपितु वर्षा करवाने में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अन्त में स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती जी महाराज ने कहा कि यज्ञ से ही मानव मात्र का कल्याण सम्भव है। जापान देश का उदाहरण देते हुए बताया कि कैसे वहाँ समुद्री पानी की वर्षा से महामारी फैली और बाद में यज्ञ से वहाँ खुशहाली हुई। हम सब को पर्यावरण को नियन्त्रित बनाये रखने के लिए इस प्रकार के यज्ञों का आरम्भ कराते रहना चाहिए।

-ब्र. निखिलार्य

ऋषि दयानन्द के दीवानों तारीख़े हकिकत समझो तो

-श्री बृजपाल शर्मा कर्मठ

ऋषि दयानन्द के दीवानों तारीख़े हकिकत समझो तो,
बलिदान सरों के है बैठे आजादी की कीमत समझो तो,
खामोश जुबां देकर के लड़ू सींचा था ये उजड़ा चमन कभी,
बन्द होकर रहे थे वेलों में चूमा था हारो रसन कभी,
''जंजीर गुलामी की तोड़ी तब पाई ये नेमत समझो तो।।१।।

भूखे भी रहे दो घूंट नही पानी भी मिला पीने के लिए,
हक मांगा फिरगीं से अपनी गोली ही मिली सीने के लिए,
लाशों को क़फन भी मिल ना सका वो दौरे मुसिबत समझो तो।।२।।

वीरां में भटक कर गाते थे नालिम तु हमें बृबाद न कर,
हकदार है हम आजादी के उन जुल्मों सितम नाशाद नाकर,
जॉ देही तराने गा-गाकर थी वतन से उल्फ़त समझो तो।।३।।

हर मार गुलामी की सहकर बदनामी पे सिरपर ले बैंठे,
अंग्रेजी परस्त लुटेरों के हाथों में वह सत्ता ले बैंठे,
बदनाम नक़ाबी चेहरों की कर्मठ अब नीपत समझो तो।।४।।

कर्मठ भवन, कम्हेड़ा, मु.नगर (उ.प्र.)

वेदार्ष-महाविद्यालय की विभिन्न शाखाओं में वेदारम्भ एवं यज्ञोपवीत संस्कार

संस्था का नाम	आयोजन दिनांक
१. श्रीमद् दयानन्द-वेदार्ष-महाविद्यालय-न्यास११९, गौतम नगर, नई दिल्ली-४९	**१० अगस्त २०१४**
२. गुरुकुल यमुनातट मंझावली फरीदाबाद (हरयाणा)	**१० अगस्त २०१४**
३. श्रीमद् दयानन्द आर्ष-ज्योतिर्मठ-गुरुकुल पौन्धा,देहरादून (उ.ख.)	**२४ अगस्त २०१४**
४. महर्षि दयानन्द गुरुकुल योगाश्रम नरसिंहनाथ,पाईकमाल, बरगड़ (उड़ीसा)	**२१ सितम्बर २०१४**
५. महर्षि दयानन्द गुरुकुल योगाश्रम पतरकोनी, बिलासपुर (छ.ग.)	**१० अगस्त २०१४**
६. महर्षि दयानन्द कन्या गुरुकुल घुचापाली, देवनगर, बरगड़ (उड़ीसा)	**२२ सितम्बर २०१४**
७. श्रीकृष्ण आर्ष गुरुकुल गोमत, अलीगढ़ (उ.प्र.)	**१० अगस्त २०१४**
वेदारम्भ, यज्ञोपवीत एवं संन्यास दीक्षा समारोह	
८. पं. लेखराम आर्ष गुरुकुल, केरल	**१६-१७ अगस्त २०१४**

संस्कृत-शिक्षणम्

ब्र. सत्यकामार्यः

अयि सुधियः पाठकाः! संस्कृतस्य शिक्षणं न कठिनम्। संस्कृतं तु अतीव सरलं मधुरं च वर्त्तते। आगच्छत वयं प्रयोगं कृत्वा पश्यामः। एतस्मिन् विभागे प्रत्यङ्गं व्यावहारिकज्ञानाय सरलानि कानिचन वाक्यानि सरला नियमाश्च प्रदीयन्ते। अत्र विचार्य पठित्वा भवन्तोऽपि संस्कृतेन व्यवहारं कर्तुमर्हन्ति।

नियमः -

१. **तत्पुरुष-समासः**

(तत्पुरुषः) इतोऽग्रे यः समासः स तत्पुरुषसंज्ञको भवति। **प्रायेण उत्तरपदार्थप्रधानस्तत्पुरुषः** तत्पुरुषसमासे प्रायेण उत्तरपदस्यार्थस्य प्रधानता भवति। तत्पुरुषसंज्ञकानां शब्दानां रूपाणि सर्वासु विभक्तिषु चलन्ति। तत्पुरुषसमासस्य प्रधानतया द्वौ भेदौ स्तः। (१) समानाधिकरणम् (२) व्यधिकरणम्।

यत्र पृथक्-पृथक् पदार्थवाचकानां शब्दानां समासो भवति स व्यधिकरणसमासोऽस्ति। यत्र च एकस्यैव पदार्थस्य विशेषण-विशेष्यरूपाणां शब्दानां समासो भवति, स समानाधिकरण समासोऽस्ति। व्यधिकरणसमासे विग्रहावस्थायां पूर्वपदे उत्तरपदे च भिन्ना-भिन्ना विभक्ती भवतः। समानाधिकरणे विग्रहावस्थायां द्वयोः पदयोः समाना विभक्ती भवतः।

उदाहरणानि-

व्याधिकरणसमासस्य उदाहरणम्-

राज्ञः पुरुषः - राजपुरुषः

राज्ञः पदे षष्ठी विभक्तिः अस्ति। पुरुषः पदे प्रथमा विभक्तिः अस्ति। द्वयोः पदयोः पृथक् विभक्ती स्तः। राजपुरुषपदे उत्तरपदस्य पुरुषशब्दस्य प्रधानता वर्त्तते।

समानाधिकरणस्योदाहरणम्-

कृष्णः सर्पः - कृष्णसर्पः

कृष्णः पदे सर्पः पदे च समानाविभक्ति अस्ति अतः अत्र समानाधिकरण तत्पुरुषसमासोऽस्ति।

शब्दकोशः -

सन्धानम्/सन्धितम्	आचार।	तिन्तडीकम्	इमली।
आर्द्रकम्	अदरक।	एला	इलायची।
आलु	आलु (पुं.)	कर्कटी	ककडी।
पनसम्	कटहल।	पलाण्डुः	प्याज।
कूष्माण्डः	कद्दु ।	वृन्ताकम्	बैंगन।
कारवेल्लम्	करेला।	वास्तुकम्	बथुआ।

आर्ष-ज्योतिः के उद्देश्य एवं नियमावली

पंजीयन संख्या :UTTBIL/2008/235/23546
डाक पंजीयन नं. : UA/DO/DDN/397/2014-16

सेवा में,
.....
.....
.....

१. आर्ष-ज्योति मासिक पत्र है। इसका उद्देश्य है, अवैदिक मान्यताओं पर आधारित विचार धाराओं को निरस्त करके वैदिक सिद्धान्तों को विश्व में प्रसारित करना।

२. महर्षि दयानन्द द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों एवं आर्षशास्त्रों से परिपुष्ट वेदव्याख्यान उपस्थित करना।

३. युवावर्ग में ब्रह्मचर्य, सदाचार, आस्तिक भावना उत्पन्न करके उन्हें भारतीय-सभ्यता का अनुगामी बनाना।

४. आर्ष-ज्योति में व्यक्तिगत राग-द्वेष और दलबन्दी सम्बन्धी रचनायें, साथ ही वैदिक सिद्धान्तों के विरुद्ध विज्ञापन तथा लेखादि प्रकाशित न होंगे। प्रत्येक लेख के तथ्यों के प्रति लेखक स्वयं उत्तरदायी होंगे।

५. लेख सारगर्भित, संक्षिप्त विद्वत्तापूर्ण हो, धर्म संस्कृति और मर्यादा का अनतिक्रमण करने वाले विवेचनपरक कथा प्रहेलिका आदि का प्रेषण करके भी आप हमारा सहयोग कर सकते हैं।

६. इसके माध्यम से जन समुदाय में संस्कृत के प्रति श्रद्धा, उत्साह और रुचि का संवर्धन करना तथा संस्कृत का प्रचार-प्रसार करना।

७. आर्ष-ज्योति के माध्यम से वेद एवं आर्ष ग्रन्थों का उपदेश, योग एवं आयुर्वेद की मनोहर वाणी को प्रति जन तक पहुंचाना है।

८. वैदिक सिद्धान्तों को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से उपयोगी सिद्ध करना एवं वेद तथा विज्ञान में सामंजस्य स्थापित करना।

९. लेखक महानुभावों से विनम्र निवेदन है कि वे अपना पासपोर्ट आकार का छायाचित्र लेख के साथ कार्यालय में सम्पादक के नाम भेजें।

१०. यह पत्र मास के 8 तिथि में प्रकाशित होकर पाठकों की सेवा में भेज दिया जाता है, 15 तिथि तक न मिलने पर व्यवस्थापक को सूचित करें।

कार्यालय :- श्रीमद् दयानन्द आर्ष-ज्योतिर्मठ-गुरुकुल
दून वाटिका-२, पौंधा, देहरादून-२४८ ००७ (उत्तराखण्ड)
दूरभाष : ०१३५-२१०२४५१, जंगमवाणी : ०९४१११०६१०४

मुद्रक, प्रकाशक एवं स्वामी : आचार्य धनंजय द्वारा श्रीमद् दयानन्द आर्ष-ज्योतिर्मठ-गुरुकुल, दून वाटिका-२ पौंधा, देहरादून (उत्तराखण्ड) से प्रकाशित एवं जयरति ऑफसेट स्क्रीन प्रिन्टर्स, ३५ कांवली रोड, देहरादून, मोब.: ९८९७९७६२२२ से मुद्रित।
सम्पादक : आचार्य धनंजय, दूरभाष : ०१३५-२१०२४५१